वृत्तपत्राचे नांव :– स्वतंत्र वार्ता
वृत्तपत्र प्रकाशनाचे ठिकाण :– हैद्राबाद
वृत्तपत्र पान क :– 5
दिनांक :–06/06/2002

वैदिक वाङ्मय का शास्त्रीय स्वरूप

संस्कृत साहित्य की शब्द रचना की दृष्टि से 'वेद' शब्द का अर्थ ज्ञान होता है, परन्तु इसका प्रयोग साधारणतया ज्ञान के अर्थ में नहीं किया जाता। हमारे महर्षियों ने अपनी तपस्या के द्वारा जिस 'शाश्वत ज्योति' का परंपरागत शब्द-रूप से साक्षात्कार किया, वही शब्द-राशि 'वेद' है। वेद अनादि हैं और परमात्मा के स्वरूप हैं। महर्षियों द्वारा प्रत्यक्ष दृष्ट होने के कारण इनमें कहीं भी असत्य या अविश्वास के लिए स्थान नहीं है। ये नित्य हैं और मूल में पुरुष-जाति से असंबद्ध होने के कारण अपौरुषेय कहे जाते हैं।

वेद अनादि-अपौरुषेय और नित्य हैं तथा उनकी प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध है, इस प्रकार का मत आस्तिक सिद्धान्तवाले सभी पौराणिकों एवं सांख्य, योग, मीमांसा और वेदान्त के दार्शनिकों का है। न्याय और वैशेषिक के दार्शनिकों ने वेद को अपौरुषेय नहीं माना है, पर वे भी इन्हें परमेश्वर (पुरुषोत्तम) द्वारा निर्मित, परन्तु पूर्वानुरूपी का ही मानते हैं। इन दोनों शाखाओं के दार्शनिकों ने वेद को परम-प्रमाण माना है और आनुपूर्वी (शब्दोच्चारणक्रम) - को सृष्टि के आरंभ से लेकर अब तक अविच्छिन्न-रूप से प्रवृत्त माना है।

जो वेद को प्रमाण नहीं मानते, वे आस्तिक नहीं कहे जाते। अतः सभी आस्तिक मतवाले वेद को प्रमाण मानने में एकमत हैं, केवल न्याय और वैशेषिक दार्शनिकों की अपौरुषेय मानने की शैली भिन्न है। नास्तिक दार्शनिकों ने वेदों को भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा रचा हुआ ग्रन्थ माना है।

चार्वाक मतवालों ने तो वेद को निष्क्रिय लोगों की जीविका का साधन तक कह डाला है। अतः नास्तिक दर्शनवाले वेद को न तो अनादि, न अपौरुषेय, और न नित्य ही मानते हैं तथा न इनकी प्रामाणिकता में ही विश्वास करते हैं। इसीलिए वे नास्तिक कहलाते हैं। आस्तिक दर्शनशास्त्रों ने इस मत का युक्ति, तर्क एवं प्रमाण से पूरा खण्डन किया है।

वेद चार हैं

वर्तमान काल में वेद चार माने जाते हैं। उनके नाम हैं - 1.ऋग्वेद 2.यजुर्वेद 3.सामवेद और 4.अथर्ववेद।

द्वापरयुग की समाप्ति के पूर्व वेदों के उक्त चार विभाग अलग-अलग नहीं थे। उस समय तो 'ऋक्' 'यजुः' और 'साम' - इन तीन शब्द शैलियों की संग्रहात्मक एक विशिष्ट अध्ययनीय शब्द-राशि ही वेद कहलाती थी। यहां यह कहना भी अप्रासंगिक नहीं होगा कि परमपिता परमेश्वर ने प्रत्येक कल्प के आरंभ में सर्व प्रथम ब्रह्माजी (परमेष्ठी प्रजापति)- के हृदय में समस्त वेदों का प्रादुर्भाव कराया था, जो उनके चारों मुखों में सर्वदा विद्यमान रहते हैं। ब्रह्माजी की ऋषिसंतानों ने आगे चलकर तपस्या द्वारा इसी शब्द-राशि का साक्षात्कार किया और पठन-पाठन की प्रणाली से इनका संरक्षण किया।

त्रयी

विश्व में शब्द-प्रयोग की तीन ही शैलियां होती हैं, जो पद्य (कविता), गद्य और गानरूप से जन-साधारण में प्रसिद्ध हैं। पद्य में अक्षर-संख्या तथा पाद एवं विराम का निश्चित नियम रहता है। अतः निश्चित अक्षर-संख्या और पाद एवं विराम वाले वेद मन्त्रों की संज्ञा 'ऋक्' है। जिन मन्त्रों में छन्द के नियमानुसार अक्षर-संख्या और पाद एवं विराम ऋषिदृष्ट नहीं हैं, वे गद्यात्मक मंत्र 'यजुः' कहलाते हैं और जितने मंत्र गानात्मक हैं, वे मंत्र 'साम' कहलाते हैं। इन तीन प्रकार की शब्द-प्रकाशन-शैलियों के आधार पर ही शास्त्र एवं लोक में वेद के लिए 'त्रयी' शब्द का भी व्यवहार किया जाता है। 'त्रयी' शब्द से ऐसा नहीं समझना चाहिए कि वेदों की संख्या ही तीन है, क्योंकि 'त्रयी' शब्द का व्यवहार शब्द-प्रयोग की शैली के आधार पर है।

श्रुत-आम्नाय

वेद के पठन-पाठन के क्रम में गुरुमुख से श्रवण कर स्वयं अभ्यास करने की प्रक्रिया अब तक है। आज भी गुरुमुख से श्रवण किये बिना केवल पुस्तक के आधार पर ही मंत्राभ्यास करना निन्दनीय एवं निष्फल माना जाता है। इस प्रकार वेद के संरक्षण एवं सफलता की दृष्टि से गुरुमुख से श्रवण करने एवं उसे याद करने का अत्यन्त महत्व है। इसी कारण वेद को 'श्रुति' भी कहते हैं। वेद परिश्रमपूर्वक अभ्यास द्वारा संरक्षणीय है। इस कारण इसका नाम 'आम्नाय' भी है। त्रयी, श्रुति और आम्नाय - ये तीनों शब्द आस्तिक ग्रन्थों में वेद के लिए व्यवहृत किये जाते हैं।

चार वेद : उस समय (द्वापरयुग की समाप्ति के समय) - में भी वेद का पढाना और अभ्यास करना सरल कार्य नहीं था। कलियुग में मनुष्यों की शक्तिहीनता और कम आयु होने की बात को ध्यान में रखकर वेदपुरुष भगवान नारायण के अवतार श्री कृष्णद्वैपायन वेदव्यास जी महाराज ने यज्ञानुष्ठान के उपयोग को दृष्टिगत रखकर उस एक वेद के चार विभाग कर दिये और इन चारों विभागों की शिक्षा चार शिष्यों को दी। ये ही चार विभाग आजकल ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और अथर्ववेद के नाम से प्रसिद्ध हैं। पैल, वैशम्पायन, जैमिनि और सुमन्तु नामक - इन चार शिष्यों ने अपने-अपने अधीत वेदों के संरक्षण एवं प्रसार के लिए शाकल आदि अपने भिन्न-भिन्न शिष्यों को पढाया। उन शिष्यों के मनोयोग एवं प्रचार के कारण वे शाखाएं उन्हीं के नाम से आजकल प्रसिद्ध हो रही हैं। यहां यह कहना अनुचित नहीं होगा कि शाखा के नाम से संबंधित कोई भी मुनि मंत्रद्रष्टा ऋषि नहीं है और न वह शाखा उसकी रचना है। शाखा के नाम से संबंधित व्यक्ति का उस वेदशाखा की रचना से संबंध नहीं है, अपितु प्रचार एवं संरक्षण के कारण संबंध है।

कर्मकाण्ड में भिन्न वर्गीकरण

वेदों का प्रधान लक्ष्य आध्यात्मिक ज्ञान देना ही है, जिससे प्राणिमात्र इस असार संसार के बन्धनों के मूलभूत कारणों को समझकर इससे मुक्ति पा सके। अतः वेद में कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड - इन दोनों विषयों का सर्वांङ्गीण निरूपण किया गया है। वेदों का प्रारंभिक भाग कर्मकाण्ड है और वह ज्ञानकाण्डवाले भाग से बहुत अधिक है।

कर्मकाण्ड में यज्ञानुष्ठान-संबंधी विधि-निषेध आदि का सर्वांङ्गीण विवेचन है। इस भाग का प्रधान उपयोग यज्ञानुष्ठान में होता है। जिन अधिकारी वैदिक विद्वानों को यज्ञ कराने का यजमान द्वारा अधिकार प्राप्त होता है, उनको 'ऋत्विक्' कहते हैं। श्रोतयज्ञ में इन ऋत्विजों के चार गण हैं। समस्त ऋत्विक चार वर्गों में बंटकर अपना-अपना कार्य करते हुए यज्ञ को सर्वांङ्गीण बनाते हैं। गणों के नाम हैं - 1.होतृगण 2.अध्वर्युगण 3.उद्गातृगण 4.ब्रह्मगण।

उपर्युक्त चारों गणों या वर्गों के लिए उपयोगी मंत्रों के संग्रह के अनुसार वेद चार हुए हैं। उनका विभाजन इस प्रकार किया गया है -

ऋग्वेद :– इसमें होतृवर्ग के लिए उपयोगी मंत्रों का संकलन है। इसका नाम ऋग्वेद इसलिए पड़ा है कि इसमें 'ऋक्' संज्ञक (पद्यबद्ध) मंत्रों की अधिकता है। इसमें होतृवर्ग के उपयोगी गद्यात्मक (यजुः) स्वरूप के भी कुछ मंत्र हैं। इसकी मंत्र संख्या अन्य वेदों में भी मिलते हैं। सामवेद में तो ऋग्वेद के मंत्र ही अधिक हैं। स्वतंत्र मंत्र कम हैं।

यजुर्वेद :– इसमें यज्ञानुष्ठान-संबंधी अध्वर्युवर्ग के उपयोगी मंत्रों का संकलन है। इसका नाम यजुर्वेद इसलिए पड़ा है कि इसमें 'गद्यात्मक' मंत्रों की अधिकता है। इसमें कुछ पद्यबद्ध, मंत्र भी हैं जो अध्वर्युवर्ग के उपयोगी हैं। इसके कुछ मंत्र अथर्ववेद में पाये जाते हैं। यजुर्वेद के दो विभाग हैं -1.शुक्लयजुर्वेद और 2.कृष्णयजुर्वेद।

सामवेद :– इसमें यज्ञानुष्ठान के उद्गातृवर्ग के उपयोगी मंत्रों का संकलन है। इसका नाम सामवेद इसलिए पड़ा है कि इसमें गायन-पद्धति के निश्चित मंत्र ही हैं। इसके अधिकांश मंत्र ऋग्वेद में उपलब्ध होते हैं, कुछ मंत्र स्वतंत्र भी हैं।

अथर्ववेद :– इसमें यज्ञानुष्ठान के ब्रह्मवर्ग के उपयोगी मंत्रों का संकलन है। इस ब्रह्मवर्ग का कार्य है यज्ञ की देख-रेख करना, समय-समय पर नियमानुसार निर्देश देना, यज्ञ में ऋत्विजों एवं यजमान के द्वारा कोई भूल हो जाय या कमी रह जाय तो उसका सुधार या प्रायश्चित करना। अथर्व का अर्थ है कमियों को हटाकर ठीक करना या कमी -रहित बनाना।

अतः इसमें यज्ञ संबंधी एवं व्यक्ति संबंधी सुधार या कमी-पूर्ति करने वाले भी मंत्र हैं। इसमें पद्यात्मक मंत्रों के साथ कुछ गद्यात्मक मंत्र भी उपलब्ध हैं। इस वेद का नामकरण अन्य वेदों की भांति शब्द शैली के आधार पर नहीं है, अपितु इसके प्रतिपाद्य विषय के अनुसार है। इस वैदिक शब्दराशि का प्रचार एवं प्रयोग मुख्यतः अथर्व नाम के महर्षि द्वारा किया गया। इसलिए भी इसका नाम अथर्ववेद है।

कुछ मंत्र सभी वेदों में या एक-दो वेदों में समान रूप से मिलते हैं, जिसका कारण यह है कि चारों वेदों का विभाजन यज्ञानुष्ठान ऋत्विक जनों के उपयोगी होने के आधार पर किया गया है। अतः विभिन्न यज्ञावसरों पर विभिन्न वर्गों के ऋत्विजों के लिए उपयोगी मंत्रों का उस वेद में आ जाना स्वाभाविक है, भले ही वह मंत्र दूसरे ऋत्विक् के लिए भी अन्य अवसर पर उपयोगी होने के अन्यत्र भी मिलता हो।

–डॉ.श्री किशोर जी मिश्र

> वेद अनादि-अपौरुषेय और नित्य हैं तथा उनकी प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध है, इस प्रकार का मत आस्तिक सिद्धान्तवाले सभी पौराणिकों एवं सांख्य, योग, मीमांसा और वेदान्त के दार्शनिकों का है। न्याय और वैशेषिक के दार्शनिकों ने वेद को अपौरुषेय नहीं माना है, पर वे भी इन्हें परमेश्वर (पुरुषोत्तम) द्वारा निर्मित ही मानते हैं। इन दोनों शाखाओं के दार्शनिकों ने वेद को परम प्रमाण माना है और आनुपूर्वी (शब्दोच्चारणक्रम) - को सृष्टि के आरंभ से लेकर अब तक अविच्छिन्न-रूप से प्रवृत्त माना है।

ऋग्वेद

सप्तम् मण्डल। चतुर्थ अनुवाक। षष्ठ अध्याय। पंचम अष्टक

96 सूक्त

(देवता पवमान सोम। ऋषि दिवोदास के पुत्र प्रतर्दन। छन्द त्रिष्टुप्।)

1. सेनापति और शत्रु-बाधक सोम शत्रुओं की गायें पाने की इच्छा से रथों के आगे युद्ध में जाते हैं। सोम की सेना प्रसन्न होती है। मित्र यजमानों के लिए इन्द्र के आह्वान को कल्याणकर बनाते हुए सोम उन दुग्ध आदि को ग्रहण करते हैं, जिनके लिए इन्द्र शीघ्र आते हैं।
2. अँगुलियाँ सोम की हरित-वर्ण किरण का अभिषव करती हैं। व्याप्त रहने पर भी सोम अननुगत-रथ रूप दशापवित्र में ठहरते हैं। इन्द्र के मित्र और प्राज्ञ सोम पवित्र से शोभन स्तुतिवाले स्तोता के पास जाते हैं।
3. द्योतमान सोम, तुम इन्द्र के पीने की वस्तु हो। हमारे देव व्याप्त यज्ञ में इन्द्र के महान् पान के लिए क्षरित होओ। तुम जल-कर्त्ता और द्यावापृथिवी के अभिषेक्ता हो। विस्तृत अन्तरिक्ष से आगत और शोधित तुम हमें धनादि प्रदान करो।
4. सोम, हमारे अपराजय, अविनाश और यज्ञ के लिए सामने आओ। मेरे सारे मित्र स्तोता तुम्हारा रक्षण चाहते हैं। पवमान सोम, मैं भी तुम्हारा रक्षण चाहता हूँ।
5. सोम क्षरित होते हैं। सोम स्तुति, द्युलोक, पृथिवी, अग्नि, प्रेरक सूर्य, इन्द्र और विष्णु के जनक हैं।
6. सोम देव-स्तोता पुरोहितों के ब्रह्मा, कवियों के शब्दविन्यासकर्त्ता, मेधावियों के ऋषि, वन्य प्राणियों के महिष, पक्षियों के राजा और अस्त्रों के स्वधिति नामक अस्त्र हैं। शब्द करते हुए सोम पवित्र का अतिक्रम करते हैं।
7. पवमान सोम तरङ्गायित नदी के समान हृदयङ्गम स्तुतिवाक्य के प्रेरक हैं। काम-वर्षक और गोज्ञाता सोम अन्तर्हित वस्तुओं को देखते हुए दुर्बलों के न रोकने योग्य बल पर अधिष्ठित रहते हैं।
8. सोम, तुम मदकर, युद्ध में शत्रुहन्ता, अगम्य और असीम जल-युक्त हो। शत्रुओं के बल को अधिकृत करो। सोम, तुम प्राज्ञ हो। तुम गायों को प्रेरित करते हुए अपनी अंशु-तरङ्ग इन्द्र के प्रति भेजो।